PUNE RESEARCH TIMES ISSN 2456-0960
AN INTERNATIONAL JOURNAL OF CONTEMPORARY STUDIES VOL 10, ISSUE 03

करूल का बेटा – मधु मंगेश कर्णिक का जीवन संघर्ष और साहित्य सेवा

डॉ पार्वती देशपांडे

हिंदी प्राध्यापिका

हैदराबाद, तेलंगाना भारत

शोध सारांश: मधु मंगेश कर्णिक का जीवन एक प्रेरणास्रोत है। मराठी साहित्य के विख्यात साहित्यकार मधु मंगेश कर्णिक जी का जीवन संघर्ष, सेवा, और साहित्य त्रिवेणी से सजा हुआ है। उन्होंने न केवल शब्दों की शक्ति से लोगों के दिल जीते, बल्कि सामाजिक कार्यों से भी समाज में बदलाव की मशाल जलाए। उनका जन्म महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग जिले के करूल गांव में हुआ। उन्होंने जीवन के प्रत्येक संघर्ष को सहर्ष स्वीकार किया और साहित्य में बदला। साहित्य, सेवा और सत्य के पथ पर अडिग रहे। उन्होंने अपने गांव, अपने मूल, अपने समाज और अपनी मातृभाषा से उन्होंने कभी नाता नहीं तोड़ा। उनका यह आत्मवाक्य उनके समस्त जीवन का सार है— "जहाँ जन्म हुआ, वहीं से जीवन खिल उठा।"

मूलशब्द- बाल्यकाल और प्रारंभिक संघर्ष, व्यक्तिगत जीवन और दृष्टिकोण, साहित्य में प्रवेश और प्रेरणाएं, सामाजिक कार्य और संस्थाएं, निष्कर्ष

बाल्यकाल और प्रारंभिक संघर्ष

लेखक मधु मंगेश कर्णिक महाराष्ट्र के सिंधुदुर्ग जिले के करूल नामक गाँव के निवासी हैं। उनका बचपन अभावों और संघर्षों से भरा हुआ था, फिर भी उनमें जीवटता, संवेदनशीलता और साहित्यिक दृष्टि का अद्‌वितीय मेल दिखाई देता है।

उनके दादा हिंदू धर्म के कट्टर अनुयायी थे और स्वामी विवेकानंद के विचारों से अत्यंत प्रभावित थे। उनके पिता के पास पुस्तकों का अच्छा-खासा संग्रह था, जो आगे चलकर लेखक के लिए प्रेरणा का स्रोत बना। दुर्भाग्यवश, उनके पिता का असमय निधन हो गया, जिससे

लेखक के मन में उदासी और लापरवाही की भावना घर कर गई। इसके कुछ वर्षों बाद बड़े भाई का भी निधन हुआ, जिसने परिवार को पूरी तरह झकझोर दिया।

इन कठिन परिस्थितियों में उनकी माँ एक मजबूत स्तंभ बनकर खड़ी रहीं। वे अशिक्षित थीं, लेकिन उनकी कल्पनाशीलता और कहानी कहने की कला अद्भुत थी। माँ की गोद में बैठकर लेखक ने रामायण और महाभारत की कहानियाँ सुनीं, जो उनके अंतर्मन में बस गईं। लेखक कहते हैं—"आई अशा अद्भुत गोष्टी रंगवून सांगायची. आता आठवलं की वाटतं — ती अशिक्षित पण कल्पक बाईचा अंश माझ्यात उतरला. तो गोष्टी लिहण्यासाठी का?"(माँ कहानियों को इतनी कल्पनाशीलता से सुनाती थी कि अब जब याद करता हूँ तो लगता है कि वह कल्पनाशक्ति मुझमें उतर आई, शायद इसलिए कि मैं लिख सकूँ।) लेखक मधु मंगेश कर्णिक का बचपन अत्यंत संघर्षपूर्ण और दयनीय परिस्थितियों में बीता। उनके पिता का असमय निधन हो गया था, जिससे परिवार पर गहरा आघात हुआ। इस दुखद परिस्थिति में उनकी माँ ने अपार साहस और धैर्य के साथ बच्चों की जिम्मेदारी अपने कंधों पर ले ली। अत्यंत गरीबी के बावजूद उन्होंने अपने बच्चों की इच्छाओं को पूरा करने का भरसक प्रयास किया।लेखक स्वयं कहते हैं—“आम्ही गरीब होतो पण खोटे नव्हतो, गरीबी असली तरी अठरा विश्व दारिद्य नव्हते, कोंड्याची मांडा करून आई मुलाच्या, चोंचीत घालतं असे नि मूलं मजेत जगत होती।”[1] (हम गरीब थे लेकिन झूठे नहीं थे। गरीबी थी, पर वह अत्यंत कष्टदायक 'अठारह विश्व दारिद्र्य' नहीं थी। माँ जो भी थोड़ी बहुत उपलब्धता थी, उससे बच्चों को प्रेमपूर्वक खिलाती और बच्चे भी उसमें खुश रहते।)यह उद्धरण लेखक की माँ के त्याग, प्रेम और आत्मबल को दर्शाता है।

व्यक्तिगत जीवन और दृष्टिकोण

मधु मंगेश कर्णिक के जीवन पर उनकी माँ के आदर्शों, संस्कारों और शिक्षाओं की अमिट छाप रही। उन्होंने जीवन भर सादगी, आत्मसम्मान और नैतिक मूल्यों को सर्वोपरि रखा। वे कभी किसी से ईर्ष्या नहीं करते थे और उनका मानना था कि—“माझ्या स्पर्धा माझ्या बरोबरच होती. मला कधी ही दुसर्या सारखं लिहावसं वाटलं नाही, कोणाची कधी ईर्ष्या ही झाली नाही. आशावाद व सकारात्मक दृष्टि मला यश देत गेली. कित्येक दिवस माझ्या लेखन कार्यात माझ्या पत्नीने मला साथ दिली।.”[2] (मेरी स्पर्धा मेरे साथ थी, मुझे कभी भी दूसरों की तरह लिखना कभी नहीं लगा। कभी किसी के प्रति ईर्ष्या भी नहीं हुई। आशावाद और सकारात्मक

दृष्टि मुझे सफलता देती गयी।) उनकी सोच हमेशा यह रही कि प्रसिद्धि पाने के लिए नहीं, बल्कि कर्तव्यनिष्ठा और सच्चे सेवा भाव से कार्य करना चाहिए। वे समाज में प्रतिष्ठित पदों— जैसे सहायक संचालक, गोवा प्रशासन में अधिकारी, तथा लघु उद्योग विकास निगम में महाप्रबंधक—पर आसीन रहे। परंतु कभी उन्होंने अपने पद या सफलता को घमंड या दिखावे का कारण नहीं बनने दिया। उनके आचरण में सदैव सादगी, आत्मीयता और संवेदनशीलता बनी रही।

उनके बचपन की एक घटना इस दृष्टिकोण को और भी स्पष्ट करती है। जब वे छोटे थे, तब उन्होंने सोने की अंगूठी पहनने की जिद की। माँ ने बड़ी कठिनाई से अपनी चेन तुड़वाकर उनके लिए अंगूठी बनवाई। लेखक ने गर्व से वह अंगूठी पहनकर गाँवभर में घूमते रहे, पर जब यह ज्ञात हुआ कि वह सोना नकली था, तो वे अत्यंत आहत हुए। उनके शब्दों में- “तेंव्हा पासुन माझ्या शरीराला वयाची साठ वर्ष होई परेंत सोन्याचा स्पर्श झाला नाही। त्यानंतर ऐपत असुन मी कणभर ही सोन न माझ्यासाठी न शशि पत्नीसाठी घेतलं.”[3] (तब से मेरे शरीर को उम्र के साठ वर्ष होने तक सोने का स्पर्श तक नहीं हुआ। उसके बाद परिस्थिति अनुकूल होने पर भी रत्ती भर सोना न मेरे लिए लिया न पत्नी शशि के लिए।) यह घटना उनके आत्मसम्मान और सच्चाई के प्रति प्रतिबद्धता को दर्शाती है।

मधु मंगेश कर्णिक ने अपने जीवन की प्रत्येक उपलब्धि केवल अपने आत्मबल, साहित्यिक प्रतिभा और जीवन-दृष्टि के बल पर अर्जित की। उनके सामने नियति के आघात, आर्थिक कठिनाइयाँ और कार्यक्षेत्र की ईर्ष्याएँ जैसी अनेक बाधाएँ थीं, पर वे कभी विचलित नहीं हुए। उन्होंने हर संघर्ष का सामना अपनी लेखनी से किया।

उनके शब्दों में— “साहित्याने माझ्या आयुष्यात अनेक सुखद गोष्टी निर्माण केल्या। त्याला नौकरीच क्षेत्र ही अपवाद नव्हते, नौकरीतील मोठ-मोठ्या जागा सामाजीक जीवनातील संस्थात्मक कार्यातील मान-सम्मान मला साहित्यमुळेच मिळाले.”[4] (साहित्य ने मेरे जीवन में कई सुखद अनुभव दिए। नौकरी का क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं रहा। नौकरी के बड़े-बड़े पद और सामाजिक जीवन में जो भी मान-सम्मान मिला, वह केवल साहित्य के कारण ही संभव हुआ।)

वे केवल साहित्यकार ही नहीं, एक संवेदनशील सामाजिक कार्यकर्ता भी थे। उन्होंने हर कार्य पूरी ईमानदारी और निष्ठा के साथ निभाया। जब वे महाराष्ट्र सचिवालय में सहायक संचालक

के रूप में कार्यरत थे, तब मुख्यमंत्री के भाषणों का लेखन भी करते थे। एक वरिष्ठ अधिकारी ने ताना मारते हुए कहा— "तुम्ही मुख्यमंत्र्याची भाषण लिहता; पण कांदबरी लिहण्या एवढं सोपं नसतं."[5] (आप मुख्यमंत्री के भाषण लिखते हैं, लेकिन उपन्यास लिखना इतना आसान नहीं होता।)

इस टिप्पणी ने लेखक के आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाई। यद्यपि वे प्रायः विवाद से दूर रहते थे, पर साहित्य को लेकर कही गई इस टिप्पणी पर उन्होंने दृढ़ता से उत्तर दिया— "साहेब, माझ्या कादंबरी लेखनाचा इथे काही संबंध नाही, नौकरीची गरज म्हणून मी इथे आहे. माझ्या साहित्याची ऊँची तुम्ही मोजू नका, तो तुमचा प्रांत नाही. सचिवालयचे सहा मजले कमी पडतील."[6] (साहब, मेरे उपन्यास लेखन का यहाँ कोई संबंध नहीं है। नौकरी की आवश्यकता के कारण मैं यहाँ हूँ। मेरे साहित्य की ऊँचाई आप मत मापिए, वह आपका विषय नहीं है। सचिवालय की छह मंजिलें भी उसके लिए कम पड़ जाएँगी।)यह घटना उनके आत्मबल, स्वाभिमान और साहित्य के प्रति अगाध श्रद्धा को दर्शाती है। उन्होंने जो भी कार्य हाथ में लिया, उसे पूरी जिम्मेदारी, प्रामाणिकता और सामाजिक कर्तव्यभाव से निभाया। उन्होंने कभी भी प्रसिद्धि या पद-प्रतिष्ठा के लिए कार्य नहीं किया, बल्कि समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्व को हमेशा प्राथमिकता दी। मधु मंगेश कर्णिक का व्यक्तिगत जीवन उनके मूल्यों, आदर्शों और माँ की प्रेरणा से अनुप्राणित रहा। उन्होंने अपने कार्यों को दायित्व समझकर निभाया और कभी भी पद या प्रसिद्धि को अपने व्यक्तित्व पर हावी नहीं होने दिया।

साहित्य में प्रवेश और प्रेरणाएं

मधु मंगेश कर्णिक के जीवन में एक महत्वपूर्ण मोड़ तब आया जब उनके मार्गदर्शक मोडके मास्टर ने शिक्षा की ओर उनका ध्यान आकर्षित किया। उन्हीं के प्रोत्साहन से वे पढ़ाई में रुचि लेने लगे और धीरे-धीरे साहित्यिक गतिविधियों में भी सहभागी बनने लगे। यह परिवर्तन उनके व्यक्तित्व और भविष्य की दिशा को नई राह देने वाला सिद्ध हुआ। मधु मंगेश कर्णिक का बचपन प्रकृति व नैसर्गिक सौंदर्य में बीता। माँ की गोद में सर रखकर साहित्य का श्रीगणेश उनकी माँ द्वारा ही हुआ। नियति से मिले एक के बाद एक धोखे ने लेखक को लिखने के लिए प्रेरित किया। जिसके संदर्भ में वे लिखते हैं- "दु:ख दारिद्र्य व नियती चा आघात यामुळे मनाला बसलेले चटके लेखनास प्रवृत्त करत होते, माझ्यातल्या सर्जनशील

मनाला माझे विचार आवाज देत होते. तेच माझ्या लेखनाचे प्रेरणास्त्रोत होते."[7] (दु:ख, गरीबी और नियति के आघात से हृदय पर लगे जख्म लिखने के लिए प्रेरित करते थे। मेरे सृजनशील मन को आवाज देते थे। यही मेरे लेखन का प्रेरणास्रोत हैं।)

उनकी पहली कविता 'कोकण वैभव' *बालसामित्र* नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई, जिसने साहित्यिक जीवन की शुरुआत को रेखांकित किया। इसके साथ ही साने गुरुजी और महात्मा गांधीजी जैसे विचारशील व्यक्तित्वों का लेखक के मन और लेखनी पर गहरा प्रभाव पड़ा। साने गुरुजी के पात्र *श्याम* को उन्होंने आत्मसात करते हुए स्वयं को श्याम मान लिया और उनके प्रति समर्पण स्वरूप 'लाडका श्याम मज निजला' जैसी मार्मिक कविता की रचना की।

दसवीं की परीक्षा में लेखक को टाइफॉएड हो जाता हैं। परीक्षा नहीं दे पाते हैं, साल भर कहानियाँ लिखने में व्यतीत करते रहे। उनकी पहली कहानी 'कृष्णाची ची राधा' (कृष्ण की राधा) 'रत्नाकर' पत्रिका में प्रकाशित हुई। दसवीं परीक्षा पास होते ही आर्थिक समस्या से निपटने के लिए मजबूरी में नौकरी करनी पड़ी। विजयदुर्ग के छोटे से बंदरगांव में बस के गॅरेज में लिपिक की नौकरी मिलती हैं। एक ओर कथालेखन और दूसरी ओर नौकरी दों जिम्मेदारियाँ निभाते जिंदगी में आगे बढ़ रहे थे। अच्छे बुरे अनुभव मिले बहुत कुछ सीखने को मिला। जब कोल्हापुर में स्थानांतरण हुआ तब से कहानियों को एक नयी चेतना मिली। कई कहानियाँ प्रकाशित हुईं। विवाह हुआ, पत्नी शशी का लेखक का साहित्यकार बनने में बहुत बड़ा योगदान रहा। जीवन में बहुत संघर्ष करना पड़ा। आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण पच्चीस रूपय के पारितोषिक के लिए कई

बार शांतिदूत में चक्कर काटने पड़े। नौकरी में छोटे से प्रमोशन के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ी।

मुंबई में स्थानांतरण होने से लेखक का पूरा जीवन ही बदल जाता हैं। वहां उनकी भेट बड़े-बड़े साहित्यकारों से हुई। पत्नी भी शिक्षिका बन जाती हैं। उनके सृजनात्मक लेखन को नई राह मिली लेकिन आर्थिक अभाव में वे तीन साल तक झोपड़पट्टी में रहे। लेखक ने इन बस्तियों में रहे लोगों के जीवन को नजदीक से देखा। इस स्थिति पर लेखक ने 'माहिम ची खाड़ी' उपन्यास का सृजन किया। डॉ. अर्जुन चव्हान लिखते हैं- "इस उपन्यास के सभी पात्र माहिम की झुग्गी-झोपड़ी के निवासी हैं। यह एक ऐसी गंदी बस्ती हैं जहाँ निम्मवर्गीय तथा सर्वहारा लोग, कीड़ों-मकड़ों की तरह जीवन जीने के लिए विवश हैं।"[8] यह उपन्यास लेखक के अनुभवों

का सिनेमा ही था। विषम परिस्थितियों में लेखक को कोई भी कार्य नहीं रोक पाया। उनका साहित्य के प्रति लगाव ही था कि जिससे वे इस झोपड़पट्टी से निकलकर पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित हुए।

सांताक्रूज के सुंदरलाल चाल के छोटे से मकान में 'मालवणी मुलखातली माणसे' पुस्तक स्वयं पु.लं. देशपांडे ने लिखी, उनका मानना था कि किताब समय पर प्रकाशित होनी चाहिए। उनकी कई रचनाएं प्रसिद्ध पत्रिका 'मौज सत्यकथा' में प्रकाशित हुई। उपन्यास, कहानी, रेखाचित्र की प्रसिद्धि ने लेखक की और मराठी साहित्यकार, संपादक व पाठकवर्ग का लक्ष केंद्रित हुआ। 1963 के लोकसत्ता के दिवाली अंक में 'वणवा' लघु उपन्यास आया, जिसमें विकलांग बच्चों की दारुण कथा का चित्रण हुआ। 'तोरण' नामक कथासंग्रह पर लेखक को महाराष्ट्र शासन द्वारा पुरस्कृत किया गया।

साहित्य में प्रसिद्धि पाने के लिए लेखक ने कभी भी डिग्री को महत्व नहीं दिया। 1966 मे गोवा प्रशासन में प्रशासन अधिकारी पर नियुक्ति हुई वह केवल साहित्यकार के बल पर ही। डिग्री प्राप्त करना, शिक्षा की ठोकरे खाने के बजाए साहित्य निर्माण के लिए ठोकरे खाने के लिए वे तत्पर थे उनके जीवनानुभवों और सामाजिक संवेदनाओं को उन्होंने 'जीवाभावाचा गोवा' जैसे ललित लेखों में सुंदरता से चित्रित किया।। गोवा के बाद लेखक महाराष्ट्र सचिवालय में मुख्यमंत्री के प्रसिद्धि अधिकारी के रूप में कार्य किया। जब तक लेखक उच्चपद पर असीन थे तब तक वे निस्वार्थ भाव से निसहाय व गरीबों की मदद करते रहे। लघु उद्योग विकास मंडल में कार्य किया, बाद में जनरल मैनेजर तक बन गए। इस पद तक पहुंचने के लिए बहुत संघर्ष करना पड़ा। उनका 1952 मे सामान्य क्लर्क से लेकर 1981 में जनरल मैनेजर बनने का सफर सच्चे अर्थों में साहस, परिश्रम और आत्मबल का प्रतीक है।

सामाजिक कार्य और संस्थाएं

साहित्यकार के साथ ही लेखक ने सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में भी कार्य किया। अपनी जन्मभूमि करूल में हाईस्कूल की स्थापना की स्कूल को पेड़ पौधों से सुभोशित किया और गांव में कांच कारखाना शुरू कर कई रोजगार की उपलब्धि की। 'कोमसाप' की स्थापना लेखक के जीवन में बड़ी महत्वपूर्ण रही। यह संस्था साहित्यप्रेमी और साहित्य से जुड़ी थी। जिसका उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं- "कोमसाप ही एक संस्था नसून प्रवाही चळवळ आहे. एक साहित्यकार आहे. साहित्य संस्कृति आहे, स्मारक नव्हे।"[9] (कोमसाप यह एक संस्था न

होकर प्रवाहात्मक आंदोलन हैं। एक साहित्यकार हैं, साहित्य संस्कृति हैं, स्मारक नहीं।) इस संस्था में लेखक पंद्रह वर्ष तक संस्थापक और अध्यक्ष पद पर कार्यरत रहे। मालगुंड (केशवसुत की जन्मस्थली) में केशवसुत के भव्य स्मारक की स्थापना की। इस भव्य आयोजन के उद्घाटन के अवसर पर प्रसिद्ध कवि कुसुमाग्रज स्मारक के बारे कहते हैं- "हे दगडमातीचे, इमारतीचे स्मारक नव्हे तर, ह्या ठिकाणी त्यानी मराठी कवितेची राजधानी उभारली आहे। हे एक काव्यतीर्थ आहे।"[10] (यह पत्थर मिट्टी, ईमारत का स्मारक नहीं हैं, यहाँ पर मराठी कविता की राजधानी स्थापित की। यह एक काव्यतीर्थ हैं।) साहित्य व समाज के प्रति कर्तव्यों को लेखक ने पूरी ईमानदारी से निभाया।"जेथे जन्मलो तेथुनच बहरत आलो."[11] (जहाँ जन्म हुआ वहाँ से ही सफल हुआ।) यह उनका आत्म उद्गार सार्थक हुआ। लेखक ने भविष्य में करूल गांव में हाइस्कूल का निर्माण कर तथा कांच कारखाना खोलकर कई ग्रामीण मजदूरों को रोजगार दिया। वे सदैव अपनी जन्मभूमि से जुड़े रहे। लेखक के जीवन का सबसे आनंद का क्षण वो था जब उन्हें पढ़रपुर पांडुरंग की पूजा करने के लिए आमंत्रित किया गया। पूजा अर्चना में विश्वास न रखनेवाले लेखक जब पत्नी के साथ विठ्ठल के दर्शन करते हैं तो वे भावविभोर होते हैं, जिसका उल्लेख करते वे लिखते हैं- "हे अडीच तास आम्ही एक अनुभूत अपूर्व अशा आनंदात वावरत होतो, चिदानंद म्हणतात तो हाच का।"[12] (यह ढाई घंटे हम एक अनुभूत अपूर्व ऐसे में आनंद में बीता रहे थे...चिदानंद जिसे कहते हैं यह यही हैं क्या?) लेखक को लगता हैं वे उस पवित्र भूमिपर हैं जहाँ पर अनेक संत, महापुरुषों को ज्ञान का बोध हुआ। पूजा के बाद 'एक चूल एक परिवार' कार्यक्रम में सहभागी हुए। लेखक को अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उनके जन्मभूमि से लेकर राज्य, राष्ट्र स्तरीय और 2010 में राष्ट्रपति द्वारा पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया। लेखक की साहित्य साधना दीर्घ हैं। एक सफल साहित्यकार और सामाजिक कार्यकर्ता बनने के लिए लेखक ने कभी राजनीति का सहारा नहीं लिया। निस्वार्थ भाव से साहित्य व समाज की सेवा की। लेखक लिखते हैं- "माझे शिक्षक, माझे गांव, मी वाचलेली पुस्तके, मला भेटलेली माणसं आणि मला करता आलेली कामं, हे सार मी सोनच मानत आलो।"[13] (मेरे शिक्षक, मेरा गांव मैंने पढ़ी हुई पुस्तकें, मुझे मिले हुए लोग और मैं कर सका वह कार्य, इन सबको मैं अमूल्य मानता आया हूँ।) जीवन में कभी परिस्थिति को कोसा नहीं, वे हमेशा आशावादी रहे।

लेखक मधु मंगेश कर्णिक साहित्यिक व साहित्यकारों के विचारों से प्रभावित थे। साथ ही साथ गांधीजी, सानेगुरूजी, डॉ. आंबेडकर, महात्मा फुले जैसे महान विभूतियों का भी उनपर

प्रभाव था। लेखक की कलम सामाजिक विषयों पर भी चली और वे सामाजिक कार्यों से जुड़े रहे। अपने गांव में स्कूल की स्थापना लघु उद्योग, शिक्षा बनाने के कारखाने का निर्माण किया। जिससे कई मजदूरों की रोजी-रोटी मिट गई। महान साहित्यकार केशवसूत उनकी जन्मभूमि मालगुड में स्मारक बनाने का कार्यभार पूरी निष्ठा से संभाला। लेखक एक साहित्य संम्मेलन के अध्यक्ष थे वे अपना कर्तव्य मानते हैं कि- “मी जेवढा साहित्यिक आहे तेवढाच समाजाशी नाळ राखून वावरणारा एक कार्यकर्ता ही आहे, मला साहित्य निर्मीतीची जेवढी ओढ आहे तेवढीच सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक काम करण्याची ही।”[14] (मैं जितना साहित्यिक हूँ, उतना ही समाज से जुड़ा एक कार्यकर्ता भी हूँ। मुझे साहित्य निर्माण में जितनी रूचि हैं उतना ही सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक कार्य करने में भी हैं।) लेखक का जीवन इस बात का उदाहरण है कि सच्चा साहित्यकार वही है, जो केवल शब्दों से नहीं, बल्कि कर्म से भी समाज को दिशा दे।

निष्कर्ष

मधु मंगेश कर्णिक का जीवन केवल संघर्ष की गाथा नहीं, बल्कि आत्मबल, मूल्यों और सृजन की यात्रा है। उनका मानना था कि साहित्य केवल कलात्मक अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि जीवन का प्रतिबिंब होता है। उन्होंने अपने लेखन में दिखावा नहीं, अंतःकरण की सच्चाई को स्थान दिया।

गरीबी, पारिवारिक आघात, सीमित शिक्षा और समाज की उपेक्षा—इन सबके बीच उन्होंने कभी आत्मसम्मान नहीं छोड़ा। उनका यह दृष्टिकोण कि *“प्रत्येक संघर्ष में अवसर छिपा होता है,”* उन्हें एक आम आदमी से असाधारण साहित्यकार बनाता है।

उन्होंने अपने जीवन की कसौटियों से जो सीखा, वही उनके साहित्य में झलकता है। उनकी माँ के संस्कार, पत्नी का सहयोग, और स्वयं का आत्मविश्लेषण ही उनके लेखन की आत्मा है। वे कहते हैं—“मी जसा आहे तसाच लिहित गेलो, माझ्या मनातलं शब्दांत उतरवत गेलो. तेव्हा ते खरे राहिले. (मै जैसा हूँ वैसा ही लिखता गया, अपने मन की बात शब्दों में ढालता गया, इसलिए वह सच्चा बना रहा।)

मधु मंगेश कर्णिक का जीवन यह सिखाता है कि ईमानदारी, संवेदना, और आत्मदर्शन यदि किसी के पास हो, तो न ही पद की आवश्यकता होती है, न ही प्रमाणपत्रों की। उनकी लेखनी

एक दर्पण है – जो न केवल समाज को दिखाती है, बल्कि लेखक का आंतरिक संघर्ष, विचारशीलता और मानवीय दृष्टिकोण भी उजागर करती है। उनकी लेखनी केवल कहानियाँ नहीं कहती, वह जीवन की वह सच्चाई है जो किताबों में नहीं मिलती—जो माँ की गोद, गांव की मिट्टी और आत्मा की गहराई से निकलती है। यही मधु मंगेश कर्णिक को एक साहित्यकार नहीं, बल्कि मानवीय मूल्य का जीवंत प्रतीक बना देती है।

सन्दर्भ सूची:

[1] मधू मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 39

[2] सं. लता गुटे - माझे प्रेरणास्त्रोत, पृ.सं. 19

[3] मधु मंगेश कर्णिक – करुलचा मुलगा, पृ.पृं. 39

[4] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 137

[5] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 165

[6] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 165

[7] सं. लता गुटे – माझे प्रेरणास्रोत, पृ.सं. 10

[8] डॉ. अर्जुन चव्हान – समकालीन उपन्यासों का वैचारिक पक्ष, पृ.सं. 196

[9] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 279

[10] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 289

[11] प्रा. एम.पी. तथा मधु पाटील – आस्वाद समीक्षा मधु मंगेश कर्णिक : साहित्य, पृ.सं. 11

[12] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 289

[13] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 370

[14] मधु मंगेश कर्णिक – करूलचा मुलगा, पृ.सं. 279